परदेस

जनसत्ता 27.4.1996

तिब्बत का मामला गरमा रहा है

शशिधर खां

तिब्बत में जन-तांत्रिक अधिकारों और पूर्ण आजादी के लिए १९९० से चल रहे आंदोलन ने इस वर्ष काफी जोर पकड़ लिया है। चीन की सरकार की बौखलाहट के लिए वैसे तो आंदोलन का लगातार जोर पकड़ते जाना पर्याप्त है लेकिन उस स्थिति का क्या कहना जब इस को व्यापक समर्थन मिल रहा हो। तिब्बत के अध्यात्मिक नेता दलाई लामा १९५१ से ही मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहे हैं और उसी समय से चीन की सरकार तिब्बतियों के शांतिपूर्ण प्रदर्शनों को टैंकों से कुचलती रही है। लेकिन १९९० में जब दलाई लामा ने अधिकारों की आवाज उठाई तो चीन के कान खड़े हो गए, क्योंकि दलाई लामा के जनतांत्रिक प्रयासों को देश-विदेश से अनेकानेक शुभकामनाएं प्राप्त हुईं- खासकर अमेरिका से और भी ज्यादा। तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने तो एक कदम आगे बढ़कर दलाई लामा को अपने यहां आने का निमंत्रण दे डाला जो चीन को जरा भी अच्छा नहीं लगा।

दलाई लामा ने पहली बार अपने यहां की जनता से कहा कि हमारे यहां की 'निर्वाचित सरकार' की कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका बिल्कुल स्वतंत्र होनी चाहिए, जिसके लिए हमारा आंदोलन जारी रहेगा। लेकिन हमें अहिंसा का रास्ता कतई नहीं छोड़ना है, और उस समय से राष्ट्रव्यापी सभाओं, प्रदर्शनों व गोष्ठियों का सिलसिला शुरू हो गया। चीनी शासक यह कहकर तिब्बत को पूरी आजादी नहीं देना चाहते कि तिब्बत तो चीन का अटूट हिस्सा है, इसलिए इसे आजाद करने का सवाल ही बेतुका है। उनके मुताबिक चीन आजाद है, तो तिब्बत भी आजाद है और इस मामले में किसी भी देश की रुचि दिखाना चीन के आंतरिक मामले में दखल माना जाएगा। जबकि दलाई लामा अब पूरे संसार को बता चुके हैं कि १९५० तक तिब्बत एक आजाद देश था, जिसे चीन ने अपनी ताकत की बदौलत १९५१ में गुलाम बना दिया। उन्होंने कहा है कि अहिंसा में विश्वास रखने वाले दस लाख बौद्धों को मरवा कर चीन ने ल्हासा की केंद्रीय बौद्ध शासन व्यवस्था खत्म कर दी। दलाई लामा का कहना है कि जब तिब्बत आजाद है तो वहां के शांतिपूर्ण प्रदर्शनों पर तोपें दागने की क्या जरूरत है और मठों के चारों ओर फौजी छावनी बनाने की क्या तुक है, जहां सिर्फ प्रार्थनाएं होती है? उन्होंने साफ शब्दों में कहा है कि तिब्बत का स्वतंत्र अस्तित्व रहा है, इसलिए यह देश किसी के अधीन नहीं रहेगा और आजादी के लिए संघर्ष जारी रहेगा।

चीन को अब शायद यह महसूस हो रहा है कि तिब्बत पर ज्यादा दिन कब्जा रखना संभव नहीं है, इसलिए सैनिक शिकंजा दिन ब दिन तिब्बत के चारों ओर कसता जा रहा है, ताकि इसके पहले कि कहीं अमेरिका ताईवान जैसी स्थिति पैदा कर दे, पूरी तैयारी कर ली जाए। चीन की सतर्कता बढ़ी पिछले वर्ष, जब तिब्बत में पहली राजनीतिक पार्टी नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी का गठन हुआ। यह तिब्बत के चीनी आधिपत्य के बाद के इतिहास की पहली घटना थी जिसका पूरे प्रांत में स्वागत किया गया और लगे हाथ इसकी युवा शाखा का भी गठन कर दिया गया। वैसे पार्टी बनाने का श्रेय तिब्बती युवा कांग्रेस को है जिसे दलाई लामा का आशीर्वाद प्राप्त है। इस पार्टी के अस्तित्व में आने और इसे मान्यता देने का परिणाम चीनी अधिकारी जानते थे, इसलिए इसकी प्रस्तावित रैली पर रोक लगा दी गई। लेकिन मामला दबने के बजाय और काबू से बाहर हो गया। चीनी शासकों द्वारा मान्यता न दिए जाने के बावजूद तिब्बती पीपुल्स डिपुटिज के चुनाव में उसने अपने उम्मीदवार खड़े किए और सबके सब जीत गए।

फिर मार्च में दलाई लामा की जनमत संग्रह की घोषणा ने आग में घी का काम किया जिसके जवाब में चीनी अधिकारियों ने धरपकड़ अभियान शुरू किया और एक हजार से ज्यादा लोग अब तक विभिन्न जेलों में बंद किए जा चुके हैं। दलाई लामा ने अपने यहां के नागरिकों को कहा कि जनमत संग्रह करा कर हमें अपना भविष्य स्वयं तय करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। उन्होंने मानवाधिकार उल्लंघन के संबंध में संयुक्त राष्ट्र की ओर से पारित किए जाने वाले प्रस्ताव का भी जिक्र किया। पिछले वर्ष नवंबर में चीनी अधिकारियों ने छह वर्षीय शिशु गेदुम चोएक्यी नेईमा को रहस्यमय ढंग से गायब करवा दिया जिसे दलाई लामा ने तिब्बतियों के अगले अध्यात्मिक नेता और पंचेन लामा के लिए चुना था। तिब्बत में इस बात को लेकर बावेला मचा जिस पर काबू पाने में चीन अभी भी सफल नहीं हो पाया है। चीन ने अपनी सफाई में कहा है कि बच्चा ल्हासा में ही है। लेकिन कहां है यह जानकारी देने से इंकार कर दिया जबकि रिपोर्ट है कि शिशु नेईमा को पेईचिंग में नजरबंद करके रखा गया है।

दो मानवाधिकार संगठनों- तिब्बत इंफोमेशन नेटवर्क और ऐशिया वाच ने इसे मुद्दा बनाया और अमेरिकी समर्थन की बदौलत ५२वें संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग के जेनेवा के मुख्यालय द्वारा शीघ्र ही चीन के खिलाफ प्रस्ताव पारित होने वाला है। चीन ने अपनी ओर से इस तरह का प्रस्ताव पारित न होने देने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ी है, लेकिन उससे तिब्बतियों के प्रति सहानुभूति और बढ़ती ही जा रही है। अमेरिकी और यूरोपीय समुदाय के रुख से साफ तौर पर जाहिर हो चुका है कि इस प्रस्ताव को उनका भरपूर समर्थन मिलेगा। चीन को इस बीच तिब्बत के मामले में विश्व के शक्तिशाली देशों को आश्वस्त करने की कोशिश में बिल्कुल प्रतिकूल रुख का सामना करना पड़ा है जिससे चीनी शासक अपने को बड़ी असंमजस की स्थिति में पा रहे हैं। माहौल इतना बिगड़ चुका है कि तिब्बत में चल रहा दमनात्मक रवैया और कठोर करते भी नहीं बन रहा है। तिब्बत से ज्यादा ताईवान के लिए समर्थन जुटाने की कोशिश में चीनी शासकों ने इधर फ्रांस और जापान की यात्रा की। प्रधानमंत्री ली फंग मार्च में पेरिस गए और विदेश मंत्री एक अप्रैल को टोकियो पहुंचे। ली फंग की फ्रांस यात्रा ऐतिहासिक थी, क्योंकि कई वर्ष बाद कोई चीनी प्रधानमंत्री अमेरिका के बाद पश्चिम के दूसरे शक्तिशाली देश के दौरे पर गया था। लेकिन जाते ही जिस तरह के माहौल का सामना ली फंग को करना पड़ा कि उनकी यात्रा का मजा किरकिरा हो गया। फ्रांस के लगभग एक दर्जन मानवाधिकार और सामाजिक संगठनों ने पूरे देश में प्रदर्शन करके तिब्बत में दमन नीति की आलोचना की और तिब्बतियों को तुरंत आजादी देने की मांग की। हालांकि फ्रांस के राष्ट्रपति शिराक ने चीनी प्रधानमंत्री के स्वागत में कोई कमी नहीं होने दी लेकिन प्रदर्शनों और जगह-जगह चिपकाए गए पोस्टरों से मेहमानों का मिजाज किरकिरा हुआ।

ताईवान की ही तरह चीन को तिब्बत के मामले में भी सबसे ज्यादा खतरा अमेरिका से है जो शुरू से ही दलाई लामा का साथ दे रहा है। सन् १९९१ में चीनी विरोध के बावजूद अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति जार्ज बुश ने दलाई लामा को न केवल अपने यहां आमंत्रित किया, बल्कि उनका स्वागत एक राष्ट्राध्यक्ष के रूप में किया और साथ में यह आश्वासन भी दिया कि तिब्बतियों की मदद में अमेरिका पीछे नहीं हटेगा। ये दोनों ही बातें चीन को नागवार गुजरीं और पेइचिंग के अमेरिकी राजदूत को बुलाकर कड़ा विरोध पत्र थमाया। उस यात्रा को लेकर काफी समय तक शोर-शराबा होता रहा। चीन में इसकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक थी। उसके पहले दलाई लामा लंदन गए थे और उस समय भी चीन ने उनका स्वागत किए जाने का विरोध किया था। हालांकि ब्रिटेन ने अभी तक दलाई लामा के प्रति खुले तौर पर समर्थन की बात नहीं कही है और उसकी वजह है हांगकांग, जिसके लिए ब्रिटेन को १९९७ तक का इंतजार है, जब इस पर पूरी तरह चीन का अधिकार हो जाएगा। हालांकि अब तो ब्रिटेन के व्यापारी यहां से अपना कारोबार लगभग समेट चुके हैं, लेकिन फिर भी एक साल के लिए चीन से तनाव मोल लेकर थोड़ा ही सही, नुकसान क्यों उठाया जाए?